अध्ययन सामग्री
विषय- हिन्दी
सेमेस्टर- प्रथम(01) स्नातकोत्तर
प्रश्न पत्र- तृतीय(cc-03)
संतकाव्य
पदनाम- डॉ स्मिता जैन
एसोसिएट प्रोफेसर
हिंदी विभाग
एच डी जैन कॉलेज, आरा

13:59 ✓✓

Scanned with CamScanner

हिन्दी साहित्य के भक्तिकाल में भक्ति की सगुण और निर्गुण यह दो धाराएँ विकसित हुई। सगुण भक्तिधारा के अंतर्गत राम और कृष्ण का भक्ति काव्य आता है, निर्गुण के अंतर्गत संत काव्य तथा सूफी काव्य आता है। संत काव्य के प्रवर्तक संत कबीर है। संत काव्य को विद्वानोंने कई नामों से संबोधित किया है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल संत काव्य को 'निर्गुण ज्ञानाश्रयी शाखा', डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इसे निर्गुण भक्तिकाव्य' तथा रामकुमार वर्मा ने इसे 'संत काव्य परम्परा' नाम से अभिहित किया है।

श्री पीताम्बर दत्त बडथ्वाल ने संत शब्द की उत्पत्ति शांत शब्द से मानी है और इसका अर्थ निवृति मार्ग या वैरागी माना है। इस संबंध में परशुराम चतुर्वेदी ने लिखा है – ''संत शब्द उस व्यक्ति की ओर संकेत करता है जिसने 'सत' रूपी परम तत्त्व का अनुभव कर लिया हो और जो इस प्रकार अपने व्यक्तित्व से ऊपर उठकर उसके साथ तद्रूप हो गया हो, जो संत स्वरुप नित्य सिद्ध वस्तु का साक्षात्कार कर चुका हो अथवा अपरोक्ष की उपलब्धि के फल स्वरुप अखण्ड सत्य में प्रतिष्ठित हो गया हो वही संत है।'' अत: निर्गुणोपासकों के लिए 'संत' तथा सगुणोपासकों के लिए 'भक्त' शब्द प्रयोग किया गया है।

डॉ. त्रिलोकीनाथ दीक्षित ने संतकाव्य धारा का दार्शनिक सांस्कृतिक आधार उपनिषद् शंकराचार्य का अद्वैत दर्शन नाथ–पंथ, इस्लामधर्म तथा सूफी दर्शन आदि को माना है। डॉ. दीक्षित ने निर्गुण भक्ति विकास के पंचतत्व को उल्लेखित किया है – ''निर्गुण भक्ति का मूल तत्व है – निर्गुण सगुण से परे अनादि, अनन्त, अनाम, अजात ब्रह्म का नाम जप। संतों ने नाम जप को साधना का आधार माना है। 'नाम' समस्त संशयों और बन्धनों को विछिन्न कर देता है। 'नाम' ही भक्ति और मुक्ति का दाता है। द्वितीय मूलतत्त्व मानसिक भक्ति। तृतीय मूल तत्व है – प्रेम के माध्यम से कर्मकाण्ड की अनपेक्षित दरुहताओं को दूर करना। चतुर्थ तत्त्व है– मानव की ऐसे विश्वव्यापी धर्म के सूत्रों में निबद्ध करना जहाँ जाति, वर्ग और वर्ण संबंधी भेद न हो। पंचम तत्व है – सहज साधना। इन तत्त्वों से निर्गुण भक्ति का विकास हुआ है।

३अ.२ संत काव्य के प्रमुख कवि

संत काव्य के प्रवर्तक संत कबीर माने जाते हैं। इस विचारधारा के बीज आदिकाल के नाथ कवियों तथा संत नामदेव की रचनाओं में मिलते हैं। भक्ति कालीन निर्गुण संत कवियों में कबीर, दादू, नानक, रैदास, सुन्दरदास, मलूकदास आदि संतो ने इस धारा के प्रचार–प्रसार

Scanned with CamScanner

तथा विकास में अपना बहुत बड़ा योगदान दिया हैं। यहाँ सभी प्रमुख संत कवियों का परिचय संक्षित रूप में दिया जा रहा है।

ज्ञानमार्गी निर्गुण धारा के प्रमुख संत कबीर

संत कबीरदास के जन्म सम्बन्ध में अनेक प्रवाद है। अंतरसाक्ष्य और कबीर चरित बोध के आधार पर इनका जन्म सन् १३९८ माना गया है। लहर तालाब के ताल के पास मिले बालक को नीरु नाम के जुलाहाने अपने घर ले जाकर उसका पालन किया नीरु की पत्नी नीमा ने माता का स्नेह दिया। परिणाम स्वरुप कबीर दास की जाति जुलाहा थी। कबीर ने अपने जीवन में दो विवाह किए थे। उनकी पत्नी का नाम 'लोई' था, जिससे उन्हें कमाल और कमाली नामक संन्तान प्राप्त हुई थी। इन का देहावसान काल सन् १५१८ ई. माना गया है।

कबीरदासजी के गुरु के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने 'रामानन्द' को स्वीकारा है। तत्कालीन हिन्दी भक्ति साहित्य आंदोलन में रामानंदजी का बहुत बड़ा योगदान है। रामानंदजी ने दशदाभक्ति के साथ ही ज्ञान मार्ग का उपदेश देकर सामाजिक हीनता की भावना को समूल नष्ठ करने का प्रयास किया और साधना एवं भक्ति को सभी वर्गों तक तथा सभी वर्णों के लिए खुला कर दिया। यही गुरु मंत्र लेकर कबीर ने तत्कालिन सामाजिक रुढि, परम्परा कुरीतियाँ, धार्मिक–सामाजिक विसंगतियों पर करारा आघात किया है। ''मसिकागद धुओं नहीं, कलाम गहयों नहीं हाथ।'' इस बात को स्वीकारने वाले कबीर ने अपनी वाणी के माध्यम से समाज जन जागरण करने का प्रयास किया। उन्होंने अपनी रचनाओं को लिपिबध्द नहीं किया। उनके परवर्ती शिष्यौ ने जन मानस में प्रचालित रचनाओं को लिपिबध्द किया। कबीर की रचनाओं में 'बीजक' को प्रामाणिक माना गया है। इसमें कबीर के उपदेशों को शिष्यों ने संकलित किया है। साखी, सबद, रमैनी बी यह बीजक के तीन भाग है। कबीर के ग्रंथों की संख्या लग–भग साठ मानी जाती है।

कबीर के काव्य की विरहानुभूति उच्च कोटी की थी। वह अपने राम के अनन्य विरही थे। उन्हें विरह की विभिन्न दशाओं की वेदना सहनी पडी थी। विरहानुभूति के बिना साधक में प्रिय–मिलन की उत्कण्ठा जागृत ही नहीं हो सकती। कबीर कहते है–

'विरहा कहै कबीर सूँ, तू जिन छाँडे मोहि।
पाप ब्रम्ह के तेज में तहाँ लै राखो तोहि।।'

कबीर काव्य में नारदी भक्ति को माना है। कबीर का मानना है कि, निर्मल मन से भक्ति पर ही 'राम' मिल सकते है–

कर्म करत बध्दे अहमेव। पाथर को करहिं सेव।।
कहु कबीर भगति कर पाया। भोले भाय मिले रघुराया।।

कबीर साहित्य के अध्ययन के बाद यह पता चलता है कि उन्होंने विभिन्न धर्म और सामाजिक विसंगति अंधविश्वास पर करारा अघात किया है। उन्होंने किसी भी धर्म को बक्शा नहीं है। उन्होंने हिन्दुओं की मुर्तिपूजा, तीर्थ यात्रा, व्रत वैफल्य, अवतारवाद, पोथी पुरान, पठन आदि पर आघात किया है और मुस्लिम धर्म में व्याप्त पाखण्डों रोजा, नमाज, हजयात्रा आदि

Scanned with CamScanner

पर प्रहार किया है। डॉ. हजारी प्रसाद के शब्दो में– 'कबीर ऐसे ही मिलन बिंदू पर खडे थे, जहाँ से एक ओर हिन्दुत्व निकल जाता है और दूसरी ओर मुसलमानत्व, जहाँ से एक ओर ज्ञान निकल जाता है और दूसरी ओर अशिक्षा, जहाँ एक ओर भक्ति मार्ग निकल जाता है और दूसरी ओर योग मार्ग, जहाँ से एक ओर निर्गुण भावना निकल जाती है और दूसरी ओर सगुण साधना, प्रशस्त चौराहे पर वे खडे दोनों ओर देख सकते थे और परस्पर विरुध्द दिशामें गये हुए मार्गों के दोष, गुण उन्हें स्पष्ट दिखाई दे रहे थे। कबीर का यह सौभाग्य था। उन्होंने इसका खूब उपयोग भी किया।' संत कबीर दास जी वे जाति, धर्म, सम्प्रदाय विरहित समाज का निर्माण करना चाहते है।

'जाति–पाँति पूछे नहिं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई।'

वे हिंदू धर्म की विसंगति पर प्रहार करते हुए कहते हैं–

'दुनिया ऐसी बावरी पाथर पूजन जाय।
घर की चकिया कोई न पूजै जेहिका पीसा खाय।'

उसी प्रकार मुस्लिम धर्म की विसंगति पर प्रहार करते हुए वे कहते है–

'कांकर पाथर जोरि कै मस्जिद लई चुनाय।
तापर मुल्ला बाँग दे क्या बहिरा हुआ खुदाय।।'
'दिन भर रोजा रहत है राति हनत हैं गाय।
यह तो खून वह बन्दगी, कैसे खुसी खुदाय।।'

संत कबीर योगियों और जैनियों को लताडते हुए कहते हैं–

'नांगे फिरे जोग जे होई बन का मृग मुकती गया कोई।
मूँड मुंडाये जो सिधि होई, स्वर्ग ही भेडन पहुँची कोई।।'

वे सिध्दों के भेद खोलते हुए कहते है–

''नारीकी झाँई परत अन्धा होय भुजंग।
कबीरा तिन को कौन गति जो नित नारी के संग।।'

जाति, धर्म, सम्प्रदाय, रुढि, परम्परावादी बाह्यआडंबर पर प्रहार कर एक मानवता वादी समाज का निर्माण संत कबीरदास करना चाहते थे।

संत कबीर की भाषा में पंजाबी, भोजपूरी, बंगला, मैथिली, राजस्थानी, लहंदा, खडी बोली, आदि का प्रयोग मिलता है। इस संदर्भ में डॉ. गोविंद त्रिगुणायत ने लिखा है–

''मेरा तो अनुमान है कबीर की भाषा में यदि देखा जाए और खोज की जाय तो भारत की प्रत्येक भाषा का कुछ न कुछ प्रभाव दिखाई देगा।'' (कबीर की विचारधारा– गोविंद त्रिगुणायत– पृ २९७) वे आमजनों को जन बोलियों में, वे पण्डितों को शुध्द हिन्दी में, मुसलमान को फारसी मिश्रित उर्दू का प्रयोग कर अपनी बात समझाते हैं।

डॉ. हजारीप्रसाद के शब्दो में– ''भाषा पर कबीर का जबरदस्त अधिकार था। वे वाणी के डिक्टेटर थे। जिस बात को उन्होंने जिस रुप में प्रकट करना चाहा, उसे उसी रुप में भाषा से कहलवा दिया।'' कबीर की भाषा श्रृंगार रसपूर्ण है 'दुलहिन गावहु मंगलाचार' इस पद से स्पष्ट होता है। कबीर के काव्य में सहज रुप से छंदों का प्रयोग हुआ है। साखी, सबद, रमैणी, बसन्त हिडोंला, चाचर बेलि, आदि छंदों का प्रयोग उनकी रचना में पाया जाता है। उनकी रचनाओं में रुपक और उपमा अलंकार का अधिक प्रयोग हुआ है। अत: कबीर की प्रतिभा में कोई संदेह नहीं है।

Scanned with CamScanner

रैदास (रविदास) :

रैदास रामानन्द की शिष्य परम्परा और कबीर के समकालीन कवि थे। रैदास का जन्म सन् १२९९ ई. में काशी में हुआ है। रैदास विवाहित थे उनकी पत्नी का नाम लोना था। इन्होंने स्वंय अपनी जाति का उल्लेख किया है- ''कह रैदास खलास चमारा'' संत रैदास पढे लिखे नहीं थे। इन्होंने प्रयाग, मथुरा, वृंदावन, भरतपुर, चितौड आदि स्थानों का भ्रमण कर निर्गुण ब्रम्ह का जनसाधारण की भाषामें प्रचार-प्रसार किया। चित्तौड की रानी और मीराँबाई इनकी शिष्या थी।

रैदास में संतों की सहजता, निस्पृहता, उदारता, विश्वप्रेम, दृढ विश्वास और सात्विक जीवन के भाव इनकी रचनाओं में मिलते है। इनकी रचनाएँ संतमन की, विभिन्न संग्रहों में संकलित मिलती है। इनके फुटकर पद 'बानी' के नाम से 'संतबानी सीरीज' में संग्रहित मिलते है। इनके '' आदि गुरु ग्रंथ साहिब'' में लगभग चालीस पद मिलते हैं। इन्होंने संत कबीर के समान मूर्तिपूजा, तीर्थयात्रा आदि बाह्यआडंबरो का विरोध किया है। कुछ पद नीचे उद्धृत है-

''तीरथ बरत न करौ अंदेशा। तुम्हारे चरण कमल भरोसा।।
जहँ तहँ जाओ तुम्हरी पूजा। तुमसा देव और नहीं दूजा।।''

संत रैदास ने जति-प्रथा पर भी प्रहार किया है अपने अपमान और ओछे पन को लेकर उन्होंने लिखा है-

'जाती ओछा पाती ओछा, ओछा जनमु हमारा।
राम राज की सेवा कीन्हीं, कहि रविदास चमारा।

संत रैदास ने तत्कालीन जातिवर्णगन भेद भाव को भी वर्णित करते है-

'जाके कुटुंब सब ढोर दोवंत
फिरही अजहूँ बनारसी आसपास
आचार सहित विप्र करहीं डंडडति
तिन वनै रविदास दासानुदास।।'

अपने भावों, और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए सरल व्यावहारिक ब्रजभाषा को अपनाया है जिसमें अवधी, राजस्थानी खडी बोली का प्रयोग किया है। साथ ही इनमें कहीं-कहीं उर्दू, फारसी के शब्दों का भी मिश्रण मिलता है।

नानक पन्थ : नानक देव (१४६९-१५३८)

नानक पन्थ के प्रवर्तक तथा सिक्ख मत के प्रवर्तक गुरु नानक देव आद्य गुरु माने जाते हैं। गुरु नानक का जन्म संवत १५२६ में तलवंडी नामक गाँव में हुआ। इनके माता-पिता का नाम तृप्ता व कालूराम था। इन का विवाह गुरुदास पूर के मूलचन्द्रखत्री की बेटी सुलक्षणी से सत्रह वर्ष की आयुमें हुआ था। इन का दो पुत्र थे- श्रीचन्द और लक्ष्मीचंद। बाल्यावस्था में ही उन्हे संस्कृत, पंजाबी, फारसी एवं हिन्दी की शिक्षा प्राप्त हुई थी। वे आरंभ से ही संत सेवा, ईश्वर भक्ति, आत्म चिंतन की ओर उन्मुख रहे। उन्हें रुढि, परम्परांगत जाति बन्धन, अनाचार, के प्रति विरोध था। उनका व्यक्तित्व असाधारण था। उनमें गृहस्थ, त्यागी,

Scanned with CamScanner

धर्मसुधारक, समाजसुधारक, देशभक्त आदि गुण थे।

गुरु नानक देव के बहुत से पद, साखियाँ तथा भजन लिखे हैं। उनका संकलन सिक्खों के छटे गुरु अर्जुन देवने सन् १६०४ में 'गुरु ग्रंथ साहिब' में संकलित किये हैं।
नानक देव की काव्य भाषा हिन्दी, फारसी और पंजाबी है। उनकी भाषा में सहजता है। आ. ह. प्र द्विवेदी लिखते हैं– ''जिन वाणियों से मनुष्य के अंदर इतना बडा अपराजेय आत्मबल और कभी समाप्त न होनेवाला साहस प्राप्त हो सकता है, उनकी महिमा
नि:संदेह अतुलनीय है। सत्चे ऱ्हदय से निकले हुए भक्त के अत्यंत सीधे उद्गार और सत्य के प्रति दृढ रहने के उपदेश कितने शक्तिशाली हो सकते हैं, यह नानक की वाणियों ने स्पष्ट कर दिया है।''

इन महान सन्तों के अतिरिक्त संत–साहित्य धारा के विकास में कवियों का योगदान रहा है। उनमें सम्प्रदाय स्थापक कवि भी है। विश्नोई सम्प्रदाय के जन्भनदास, साध सम्प्रदाय के वीरभान और जोगीदास, लाल पन्थ के लालदास, दादू पंथ के दादूदयाल, मलूक पंथ के मलूकदास, वारकरी सम्प्रदाय के ज्ञानेश्वर, नामदेव, तुकाराम, एकनाथ आदि सम्प्रदाय एवं सम्प्रय प्रमुखों ने संत साहित्य धारा के विकास में योगदान दिया है।

Scanned with CamScanner